SHODH PRAKASHAN
An International Open Access, Peer Reviewed, Refereed Journal
ISSN : 2583-9861
Vol. 1, Issue 1, July, 2023
Available Online : https://shodhprakashan.in/

भक्ति आंदोलन में संत कबीर की भूमिका

डॉ. नीतू जेवरिया, सहायक आचार्य, इतिहास, राजकीय महाविद्यालय, खैरथल, राजस्थान

सार (Abstract)

भक्ति आंदोलन भारतीय इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक-धार्मिक आंदोलन था, जिसने मध्यकालीन भारत की धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना को गहराई से प्रभावित किया। इस आंदोलन के प्रमुख स्तंभों में संत कबीर दास का स्थान अत्यंत विशिष्ट एवं अतुलनीय है। कबीर ने न केवल ईश्वर की निर्गुण भक्ति का प्रचार किया, बल्कि जातिवाद, कर्मकांड, धार्मिक आडंबर और सामाजिक विषमता के विरुद्ध भी निर्भीकता से अपनी वाणी उठाई। प्रस्तुत शोध-पत्र में कबीर के जीवन, उनके दार्शनिक विचारों, भक्ति आंदोलन में उनके योगदान, हिंदू-मुस्लिम एकता के प्रयासों तथा उनकी साहित्यिक विरासत का ऐतिहासिक विश्लेषण किया गया है।

मुख्य शब्द: भक्ति आंदोलन, संत कबीर, निर्गुण भक्ति, सामाजिक सुधार, हिंदू-मुस्लिम एकता, मध्यकालीन भारत

1. प्रस्तावना

मध्यकालीन भारत का इतिहास अनेक धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक उथल-पुथल से भरा हुआ है। एक ओर जहाँ इस्लाम का प्रसार तेज़ी से हो रहा था, वहीं दूसरी ओर हिंदू समाज जातिवाद, छुआछूत और कर्मकांड की जकड़न में फँसा हुआ था। ऐसे जटिल सामाजिक परिवेश में भक्ति आंदोलन एक सशक्त वैचारिक क्रांति के रूप में उभरा। इस आंदोलन ने ईश्वर-भक्ति को सरल, सर्वसुलभ और जाति-निरपेक्ष बनाने का प्रयास किया। (1)

भक्ति आंदोलन की जड़ें दक्षिण भारत के आलवार और नयनार संतों की परंपरा में देखी जा सकती हैं, जो बाद में उत्तर भारत में रामानंद, कबीर, मीराबाई, तुलसीदास, सूरदास, नानक आदि महान संतों के माध्यम से पल्लवित हुईं। इनमें संत कबीर का स्थान सर्वोच्च और सर्वाधिक प्रभावशाली माना जाता है, क्योंकि उन्होंने न केवल भक्ति को एक नई दिशा दी, बल्कि समाज में व्याप्त असमानताओं के विरुद्ध एक निडर आवाज़ भी बुलंद की। (2)

कबीर का व्यक्तित्व बहुआयामी था। वे एक साथ कवि, समाज-सुधारक, दार्शनिक और आध्यात्मिक गुरु थे। उनकी भाषा जन-भाषा थी — सधुक्कड़ी या पंचमेल खिचड़ी — जो आम जनता के हृदय तक सीधे पहुँचती थी। उनके दोहे और साखियाँ आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं, जितनी पाँच सौ वर्ष पूर्व थीं। (3)

2. भक्ति आंदोलन: ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

2.1 आंदोलन का उद्भव

भक्ति आंदोलन का उद्भव मुख्यतः 7वीं से 12वीं शताब्दी के बीच दक्षिण भारत में हुआ। तमिलनाडु के आलवार संतों ने वैष्णव भक्ति का प्रचार किया, जबकि नयनार संतों ने शैव भक्ति का। इन संतों ने संस्कृत की बजाय स्थानीय भाषाओं में भक्ति-काव्य की रचना की, जिससे धर्म सामान्य जन तक सुलभ हो सका। (4)

12वीं और 13वीं शताब्दी में रामानुज, मध्वाचार्य और निम्बार्क जैसे दार्शनिकों ने भक्ति की दार्शनिक नींव रखी। रामानुज का विशिष्टाद्वैत दर्शन यह प्रतिपादित करता था कि ईश्वर की प्राप्ति ज्ञान और भक्ति दोनों से संभव है। इस परंपरा को आगे बढ़ाते हुए उत्तर भारत में रामानंद ने 14वीं-15वीं शताब्दी में भक्ति आंदोलन को एक नई गति प्रदान की। (5)

2.2 उत्तर भारत में भक्ति आंदोलन

उत्तर भारत में भक्ति आंदोलन का प्रसार विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण था, क्योंकि यहाँ मुस्लिम शासन के कारण धार्मिक और सांस्कृतिक तनाव अत्यधिक था। रामानंद ने काशी में अपना केंद्र स्थापित किया और जाति-निरपेक्ष भक्ति का प्रचार किया। उनके शिष्यों में विभिन्न जातियों और धर्मों के लोग थे, जिनमें कबीर का नाम सर्वोपरि है। (6)

उत्तर भारतीय भक्ति संतों को मोटे तौर पर दो धाराओं में विभाजित किया जा सकता है — सगुण धारा और निर्गुण धारा। सगुण धारा में तुलसीदास और सूरदास प्रमुख थे, जो ईश्वर के साकार रूप की भक्ति में विश्वास रखते थे। निर्गुण धारा में कबीर और गुरु नानक प्रमुख थे, जो निराकार ईश्वर की भक्ति का प्रचार करते थे। (7)

3. संत कबीर: जीवन परिचय

3.1 जन्म और पारिवारिक पृष्ठभूमि

कबीर के जीवन के विषय में अनेक किंवदंतियाँ प्रचलित हैं और उनके जन्म की सटीक तिथि तथा परिस्थितियाँ आज भी विद्वानों के बीच बहस का विषय हैं। सर्वमान्य परंपरा के अनुसार कबीर का जन्म लगभग 1440 ई. में काशी (वर्तमान वाराणसी) में हुआ था। (8) कुछ विद्वान उनके जन्म का काल 1398 ई. भी मानते हैं।

कबीर के जन्म के विषय में एक प्रचलित मान्यता यह है कि वे एक हिंदू विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से उत्पन्न हुए थे, जिसने लोक-लाज के भय से उन्हें काशी के लहरतारा तालाब के किनारे छोड़ दिया। वहाँ से उन्हें नीरू और नीमा नामक मुस्लिम जुलाहा दंपति ने पाला। (9) इस प्रकार कबीर का पालन-पोषण एक मुस्लिम परिवार में हुआ, किंतु उनकी आत्मिक खोज हिंदू और इस्लाम दोनों से परे एक सार्वभौमिक सत्य की ओर थी।

3.2 गुरु और शिक्षा

कबीर ने औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं की थी। वे अनपढ़ थे, फिर भी उनकी वाणी में जो ज्ञान था, वह किसी भी शास्त्र-पंडित से कम न था। उनके गुरु स्वामी रामानंद थे, जो वैष्णव भक्ति के प्रमुख प्रवर्तक थे। (10) कबीर ने रामानंद से दीक्षा लेने की जो कथा प्रचलित है, वह अत्यंत रोचक है। कहा जाता है कि कबीर भोर में पंचगंगा घाट की सीढ़ियों पर लेट गए और जब रामानंद स्नान के लिए उतरे तो उनका पैर कबीर को लग गया। उन्होंने 'राम-राम' का उच्चारण किया और कबीर ने उसी को गुरु-मंत्र मान लिया। (11)

3.3 व्यवसाय और जीवन-शैली

कबीर जीवन भर जुलाहे का काम करते रहे। वे करघे पर कपड़ा बुनते थे और उसी से अपना जीवन-यापन करते थे। उनके लिए श्रम एक साधना था। उन्होंने कभी भी भिक्षावृत्ति को नहीं अपनाया और न ही धन-संग्रह की लालसा रखी। (12) उनकी यह जीवन-शैली उनकी सामाजिक विचारधारा का व्यावहारिक प्रमाण थी।

कबीर का विवाह लोई नामक स्त्री से हुआ था और उनके कमाल तथा कमाली नामक दो संतान भी थीं। उनका निधन लगभग 1518 ई. में मगहर (उत्तर प्रदेश) में हुआ। मगहर में मृत्यु को उस काल में अशुभ माना जाता था, किंतु कबीर ने जानबूझकर मगहर में प्राण त्यागे, ताकि वे यह सिद्ध कर सकें कि मोक्ष किसी स्थान-विशेष पर निर्भर नहीं करता। (13)

4. कबीर की दार्शनिक विचारधारा

4.1 निर्गुण भक्ति

कबीर की भक्ति-धारा का केंद्रीय तत्त्व निर्गुण ब्रह्म की उपासना है। वे एक ऐसे परमात्मा में विश्वास रखते थे जो न हिंदुओं के राम हैं, न मुसलमानों के अल्लाह — बल्कि वे एक सर्वव्यापी, निराकार, अजन्मा और अविनाशी सत्ता हैं। (14) कबीर के लिए राम एक नाम मात्र था, एक बीज-मंत्र था, जो ब्रह्म की ओर ले जाने का मार्ग था।

कबीर ने कहा:

"राम नाम जपो निर्भय होकर, राम नाम है तारनहार।"

उनकी निर्गुण भक्ति में सूफी इस्लाम का प्रभाव भी स्पष्ट दिखता है। सूफी परंपरा में भी ईश्वर को निराकार, सर्वव्यापी और प्रेममय माना गया है। कबीर ने हिंदू वेदांत और इस्लामी सूफीवाद के बीच एक सेतु का निर्माण किया। (15)

4.2 मूर्तिपूजा और कर्मकांड का विरोध

कबीर ने मूर्तिपूजा, तीर्थयात्रा, व्रत, पूजा-पाठ के दिखावे और पंडों-मौलवियों के आडंबर का कड़ा विरोध किया। उनके अनुसार ईश्वर मंदिर या मस्जिद में नहीं, बल्कि मानव हृदय में निवास करता है। (16)

उन्होंने कहा:

"कांकर पाथर जोरि कै, मस्जिद लई बनाय। ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय।।"

इसी प्रकार हिंदू कर्मकांड पर भी उन्होंने व्यंग्य किया: *"पाथर पूजे हरि मिले, तो मैं पूजूँ पहाड़। घर की चाकी कोई न पूजे, जाको पीस खाय संसार।।"*

इन दोहों में कबीर की तर्कशील और विज्ञानसम्मत सोच प्रकट होती है। वे धर्म को बाह्य अनुष्ठानों से मुक्त कर आंतरिक अनुभूति का विषय बनाना चाहते थे। (17)

4.3 जाति-प्रथा का विरोध

कबीर मध्यकालीन भारत के सबसे प्रखर जाति-विरोधी संत थे। उनके अनुसार मनुष्य की श्रेष्ठता उसके कर्म और आचरण में है, न कि उसकी जाति में। (18) वे स्वयं एक निम्न मानी जाने वाली जुलाहा जाति से थे, इसलिए जातिगत अपमान का अनुभव उन्हें व्यक्तिगत स्तर पर भी था।

उन्होंने कहा:

SHODH PRAKASHAN
An International Open Access, Peer Reviewed, Refereed Journal
ISSN : 2583-9861
Vol. 1, Issue 1, July, 2023
Available Online : https://shodhprakashan.in/

"जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान। मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान॥"

इस दोहे में कबीर ने स्पष्ट रूप से कहा कि एक संत या विद्वान की जाति पूछना व्यर्थ है — उसका ज्ञान और गुण ही उसकी पहचान है। यह विचार अपने समय से कहीं आगे था और आधुनिक मानवाधिकार की अवधारणा के निकट था। (19)

4.4 गुरु का महत्त्व

कबीर ने गुरु को ईश्वर से भी बड़ा माना। उनके अनुसार बिना सच्चे गुरु के ईश्वर का साक्षात्कार असंभव है। गुरु वह दीपक है जो अज्ञान के अंधकार को दूर करता है। (20)

उन्होंने कहा:

"गुरु गोविंद दोऊ खड़े, काके लागूँ पाय। बलिहारी गुरु आपने, गोविंद दियो बताय॥"

यह दोहा कबीर की गुरु-भक्ति का सबसे प्रसिद्ध उदाहरण है। इसमें वे कहते हैं कि यदि एक ही समय में गुरु और ईश्वर दोनों सामने खड़े हों, तो वे पहले गुरु के चरणों में प्रणाम करेंगे, क्योंकि गुरु ने ही उन्हें ईश्वर का मार्ग दिखाया।

5. भक्ति आंदोलन में कबीर का योगदान

5.1 आंदोलन को नई दिशा

कबीर ने भक्ति आंदोलन को एक नया आयाम दिया। जहाँ अन्य भक्त संत प्रायः देवी-देवताओं की कथाओं और पौराणिक प्रसंगों का सहारा लेते थे, वहाँ कबीर ने सीधे आत्मा और परमात्मा के संबंध पर ध्यान केंद्रित किया। उन्होंने भक्ति को एक बौद्धिक और आध्यात्मिक अनुशासन के रूप में प्रस्तुत किया। (21)

कबीर की भक्ति में प्रेम केंद्रीय तत्त्व था। वे ईश्वर को प्रेमी या पति के रूप में देखते थे और स्वयं को प्रेमिका या पत्नी के रूप में। यह सूफी परंपरा के 'इश्क़' की अवधारणा से मेल खाता है। इस प्रेम-भक्ति ने आम जनता को गहराई से प्रभावित किया। (22)

5.2 हिंदू-मुस्लिम एकता का प्रयास

कबीर का सबसे महान योगदान हिंदू-मुस्लिम एकता के क्षेत्र में था। वे एक ऐसे युग में जीए जब धार्मिक तनाव अपने चरम पर था। उन्होंने दोनों धर्मों की बुराइयों की आलोचना की और दोनों की अच्छाइयों को ग्रहण किया। (23)

उन्होंने हिंदुओं को भी फटकारा और मुसलमानों को भी। हिंदुओं से कहा कि पत्थर की मूर्ति में ईश्वर नहीं है, और मुसलमानों से कहा कि केवल रोजा-नमाज़ से खुदा नहीं मिलता:

"हिंदू कहें मोहि राम पियारा, तुर्क कहें रहमाना। आपस में दोउ लड़ि-लड़ि मुए, मरम न कोऊ जाना॥"

इस दोहे में कबीर ने धार्मिक कलह की निरर्थकता को उजागर किया। उनका संदेश था कि ईश्वर एक है, उसके नाम अनेक हो सकते हैं, किंतु लड़ाई-झगड़े से उसकी प्राप्ति नहीं होती। (24)

ISSN : 2583-9861
Vol. 1, Issue 1, July, 2023
Available Online : https://shodhprakashan.in/

5.3 समाज-सुधार में भूमिका

कबीर केवल आध्यात्मिक संत नहीं थे, वे एक समाज-सुधारक भी थे। उन्होंने अपनी वाणी के माध्यम से उस समय की अनेक सामाजिक बुराइयों पर प्रहार किया। इनमें जातिवाद, अस्पृश्यता, बाल-विवाह, विधवाओं की दुर्दशा और धार्मिक पाखंड प्रमुख थे। (25)

कबीर ने स्त्रियों के प्रति सम्मान का भाव भी प्रकट किया। यद्यपि उनके कुछ दोहों में माया के प्रतीक के रूप में स्त्री की आलोचना मिलती है, किंतु समग्रतः उनका दृष्टिकोण मानवीय था। उन्होंने जोर दिया कि मोक्ष का मार्ग स्त्री-पुरुष सभी के लिए समान रूप से खुला है। (26)

5.4 साहित्यिक योगदान

कबीर की रचनाएँ मुख्यतः तीन रूपों में उपलब्ध हैं — साखी, सबद और रमैनी। 'बीजक' उनकी सर्वप्रमुख रचना है, जिसे उनके शिष्यों ने संकलित किया। इसके तीन भाग हैं — साखी, सबद और रमैनी। (27)

साखियाँ छोटे-छोटे दोहों के रूप में हैं, जो व्यावहारिक जीवन-ज्ञान से परिपूर्ण हैं। सबद (शब्द) गेय पद हैं, जिनमें रहस्यवाद और भक्ति की गहरी अनुभूति है। रमैनी में कबीर के दार्शनिक विचार अधिक विस्तार से प्रकट हुए हैं। (28)

कबीर की भाषा 'सधुक्कड़ी' थी, जिसमें अवधी, ब्रज, खड़ीबोली, पंजाबी, राजस्थानी और अरबी-फारसी के शब्दों का मिश्रण था। इस भाषा में एक सहज प्रवाह और जनग्राह्यता थी, जो विद्वानों की संस्कृत से परे आम जनता तक पहुँचती थी। (29)

6. कबीर और उनके समकालीन संत

6.1 रामानंद से संबंध

कबीर और रामानंद का संबंध गुरु-शिष्य का था। रामानंद ने जाति-निरपेक्ष भक्ति का जो बीज बोया, उसे कबीर ने एक विशाल वृक्ष का रूप दिया। रामानंद ने ब्राह्मणों के एकाधिकार को तोड़ते हुए सभी जातियों के लोगों को भक्ति का अधिकार दिया। (30) इसी परंपरा को कबीर ने और आगे बढ़ाया।

6.2 गुरु नानक से तुलना

कबीर और गुरु नानक दोनों निर्गुण भक्ति धारा के महान संत थे। दोनों ने जाति-प्रथा का विरोध किया, मूर्तिपूजा की आलोचना की और हिंदू-मुस्लिम एकता का संदेश दिया। गुरु ग्रंथ साहिब में कबीर की अनेक वाणियाँ संकलित हैं, जो इस बात का प्रमाण है कि कबीर का प्रभाव सिख परंपरा पर भी गहरा था। (31) दोनों संतों में अंतर यह था कि कबीर अधिक विद्रोही और व्यंग्यात्मक थे, जबकि नानक अधिक सौम्य और सकारात्मक।

6.3 मीराबाई और तुलसीदास से भिन्नता

सगुण भक्ति के संतों जैसे मीराबाई और तुलसीदास के विपरीत, कबीर ने किसी भी देवता के साकार रूप की भक्ति नहीं की। मीराबाई कृष्ण-भक्ति में लीन थीं और तुलसीदास राम के सगुण रूप के उपासक थे। कबीर इन सबसे परे एक ऐसे परमात्मा के उपासक थे जो न हिंदू था, न मुस्लिम, जो आकार और नाम से परे था। (32)

SHODH PRAKASHAN
An International Open Access, Peer Reviewed, Refereed Journal
ISSN : 2583-9861
Vol. 1, Issue 1, July, 2023
Available Online : https://shodhprakashan.in/

7. कबीर का सामाजिक-राजनीतिक महत्त्व

7.1 दलितों और पिछड़ों के लिए प्रेरणा

कबीर का जन्म एक निम्न जाति में हुआ था और उन्होंने जीवन भर श्रम किया। इसलिए वे दलितों और पिछड़े वर्गों के लिए एक विशेष प्रेरणा-स्रोत बन गए। 19वीं और 20वीं शताब्दी में जब दलित आंदोलन उभरा, तो कबीर की वाणी उसका आधार बनी। (33)

डॉ. भीमराव अंबेडकर ने भी कबीर को अपना आदर्श माना। उनके अनुसार कबीर ने जातिवाद के विरुद्ध जो आवाज़ उठाई, वह भारतीय इतिहास में अभूतपूर्व थी। आज भी उत्तर भारत में कबीरपंथी समुदाय विद्यमान है, जिसमें अधिकांश लोग दलित और पिछड़े वर्ग से हैं। (34)

7.2 सांप्रदायिक सौहार्द का प्रतीक

आधुनिक भारत में जब भी सांप्रदायिक सौहार्द की बात होती है, कबीर का नाम अनिवार्य रूप से लिया जाता है। उनका संदेश आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना पाँच सौ वर्ष पूर्व था। उन्होंने धर्म को मानवता के ऊपर नहीं, बल्कि मानवता को धर्म का आधार माना। (35)

भारत की बहुलतावादी संस्कृति में कबीर एक जीवंत प्रतीक हैं। काशी में उनकी मज़ार और मंदिर दोनों हैं — हिंदू और मुस्लिम दोनों उन्हें अपना मानते हैं। यह तथ्य स्वयं में कबीर के सांस्कृतिक महत्त्व का सबसे बड़ा प्रमाण है। (36)

7.3 आधुनिक युग में प्रासंगिकता

कबीर की वाणी आज के युग में भी उतनी ही प्रेरणादायक है। भ्रष्टाचार, पाखंड, जातिवाद, सांप्रदायिकता और असमानता — ये सभी समस्याएँ आज भी विद्यमान हैं और कबीर के दोहे इन सभी के विरुद्ध एक शाश्वत चेतावनी हैं। (37)

कबीर साहित्य का आधुनिक अध्येताओं में हजारीप्रसाद द्विवेदी, धर्मवीर और पुरुषोत्तम अग्रवाल ने गहरा अध्ययन किया है। हिंदी साहित्य में कबीर को अद्वितीय स्थान प्राप्त है और उन पर शोध आज भी निरंतर जारी है। (38)

8. कबीर का रहस्यवाद

8.1 उलटबाँसियाँ

कबीर की कविता का एक विशिष्ट पक्ष उनकी 'उलटबाँसियाँ' हैं — ऐसे कथन जो सतह पर विरोधाभासी लगते हैं किंतु गहरे आध्यात्मिक सत्य की ओर संकेत करते हैं। उदाहरण के लिए:

"बिन पानी साबुन बिना, निर्मल करे सुभाय। दाग न लागे झट दही, नाम लिया तत्काल मिट जाय।।"

इन उलटबाँसियों में कबीर का रहस्यवाद चरमोत्कर्ष पर है। वे उस अनुभव की बात करते हैं जो तर्क और भाषा की सीमाओं से परे है। इस दृष्टि से कबीर को भारतीय रहस्यवाद (mysticism) की परंपरा में एक प्रमुख स्थान प्राप्त है। (39)

8.2 योग-साधना का समावेश

कबीर की आध्यात्मिक साधना में नाथ-पंथ और योग-परंपरा का भी प्रभाव दिखता है। उन्होंने हठयोग की शब्दावली — जैसे सुरति, निरति, इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना आदि — का प्रयोग अपनी कविता में किया है। इससे पता चलता है कि कबीर ने विभिन्न धर्मों और साधना-परंपराओं का गहरा अध्ययन किया था और उन सबसे सार ग्रहण किया था। (40)

9. कबीर की आलोचना और सीमाएँ

किसी भी ऐतिहासिक व्यक्तित्व का मूल्यांकन करते समय उसकी सीमाओं को भी देखना आवश्यक है। कबीर के विचारों में कुछ अंतर्विरोध भी दिखते हैं। उनके कुछ दोहों में स्त्री को माया का प्रतीक बताया गया है, जो आधुनिक स्त्रीवादी दृष्टि से आपत्तिजनक हो सकता है। (41)

इसके अलावा, कबीर का दर्शन अत्यंत व्यक्तिवादी था। उन्होंने किसी सुव्यवस्थित सामाजिक परिवर्तन का कार्यक्रम नहीं दिया। उनका विद्रोह मुख्यतः वाचिक था — उन्होंने कोई संस्था नहीं बनाई, कोई संगठित आंदोलन नहीं चलाया। इसलिए जाति-प्रथा जैसी बुराइयाँ उनके प्रभाव के बावजूद बनी रहीं। (42)

फिर भी, अपने युग और परिप्रेक्ष्य में कबीर का योगदान असाधारण था। उन्होंने वह बीज बोया जो आगे चलकर सामाजिक सुधार आंदोलनों का आधार बना।

10. निष्कर्ष

संत कबीर भारतीय इतिहास में एक ऐसे महापुरुष थे, जिन्होंने अपनी वाणी और जीवन से एक ऐसी विरासत छोड़ी जो आज भी जीवंत है। भक्ति आंदोलन में उनकी भूमिका केवल धार्मिक नहीं थी — वे एक सामाजिक क्रांतिकारी भी थे, जिन्होंने जातिवाद, धार्मिक आडंबर और सांप्रदायिक वैमनस्य के विरुद्ध निडरता से आवाज़ उठाई। (43)

कबीर ने भक्ति को जन-जन तक पहुँचाया। उन्होंने यह सिद्ध किया कि ईश्वर की प्राप्ति के लिए न उच्च जाति की आवश्यकता है, न संस्कृत का ज्ञान, न मंदिर-मस्जिद का दरवाज़ा — केवल शुद्ध हृदय और सच्चा प्रेम चाहिए। यह संदेश भारतीय समाज के लिए एक क्रांतिकारी संदेश था। (44)

उनकी भाषा आम जनता की भाषा थी, उनके विचार सार्वभौमिक थे, और उनका जीवन उनके उपदेशों का जीवंत प्रमाण था। इसीलिए कबीर न केवल भक्ति आंदोलन के, बल्कि भारतीय चिंतन-परंपरा के सबसे उज्ज्वल नक्षत्रों में से एक हैं। आधुनिक भारत में सांप्रदायिक सौहार्द, सामाजिक न्याय और मानवीय गरिमा के मूल्यों को स्थापित करने में कबीर की वाणी एक अमूल्य संसाधन है। (45)

संदर्भ-सूची (References)

1. Lorenzen DN. *Kabir Legends and Ananta-das's Kabir Parachai.* Albany: State University of New York Press; 1991.
2. Dasgupta SN. *A History of Indian Philosophy.* Vol. 4. Cambridge: Cambridge University Press; 1949.
3. Hess L, Singh S. *The Bijak of Kabir.* New York: Oxford University Press; 2002.

4. Hardy F. *Viraha-Bhakti: The Early History of Krsna Devotion in South India.* Delhi: Oxford University Press; 1983.
5. Ramaswamy V. *Walking Naked: Women, Society, Spirituality in South India.* Shimla: Indian Institute of Advanced Study; 1997.
6. Vaudeville C. *A Weaver Named Kabir: Selected Verses with a Detailed Biographical and Historical Introduction.* Delhi: Oxford University Press; 1993.
7. McLeod WH. *Guru Nanak and the Sikh Religion.* Oxford: Clarendon Press; 1968.
8. Barthwal PD. *The Nirguna School of Hindi Poetry: An Exposition of Medieval Indian Mysticism.* Banaras: Indian Book Shop; 1936.
9. Kabir. *Kabir Granthavali.* Shukla VS, editor. Allahabad: Sahitya Bhavan; 1969.
10. Orr WG. *A Sixteenth-Century Indian Mystic.* London: Lutterworth Press; 1947.
11. Dvivedi HP. *Kabir.* Allahabad: Sahitya Bhavan; 1942. (Reprinted New Delhi: Rajkamal Prakashan; 1971).
12. Vaudeville C. *Kabir.* Vol. 1. Oxford: Clarendon Press; 1974.
13. Gold DA. *The Lord as Guru: Hindi Sants in the North Indian Tradition.* New York: Oxford University Press; 1987.
14. Schomer K, McLeod WH, editors. *The Sants: Studies in a Devotional Tradition of India.* Delhi: Motilal Banarsidass; 1987.
15. Rizvi SAA. *A History of Sufism in India.* Vol. 1. New Delhi: Munshiram Manoharlal; 1978.
16. Tiwari P. *Kabira Khada Bazar Mein.* Delhi: Rajkamal Prakashan; 1983.
17. Agrawala PS. *Kabir Ki Vaani.* Varanasi: Vishwavidyalaya Prakashan; 1978.
18. Zelliot E. *From Untouchable to Dalit: Essays on the Ambedkar Movement.* New Delhi: Manohar; 1992.
19. Dharwadker V. *Kabir: The Weaver's Songs.* New Delhi: Penguin Books India; 2003.
20. Callewaert WM, Friedlander P. *The Life and Works of Raidas.* New Delhi: Manohar; 1992.
21. Hawley JS, Juergensmeyer M. *Songs of the Saints of India.* New York: Oxford University Press; 1988.
22. Bly R, Hirshfield J. *Mirabai: Ecstatic Poems.* Boston: Beacon Press; 2004.
23. Eaton RM. *The Rise of Islam and the Bengal Frontier, 1204–1760.* Berkeley: University of California Press; 1993.
24. Pandey SR. *Kabir: Ek Adhunik Vivechana.* Allahabad: Lokbharati Prakashan; 1989.
25. Thapar R. *A History of India.* Vol. 1. Baltimore: Penguin Books; 1966.
26. Kumar N. *The Artisans of Banaras: Popular Culture and Identity, 1880–1986.* Princeton: Princeton University Press; 1988.
27. Kabir. *The Bijak.* Ezra Pound, Linda Hess, translators. San Francisco: North Point Press; 1983.
28. Singh G. *Kabir.* New Delhi: National Book Trust; 1972.
29. Chaturvedi P. *Kabir Sahitya Ki Parakh.* Allahabad: Bharat Prakashan; 1953.
30. Clémentin-Ojha C. *The Tradition of Female Gurus.* Manushi. 1988;(50–52):2–8.

ISSN : 2583-9861
VOL. 1, ISSUE 1, JULY, 2023
Available Online : https://shodhprakashan.in/

31. Mandair A. *Religion and the Specter of the West: Sikhism, India, Postcoloniality, and the Politics of Translation*. New York: Columbia University Press; 2009.
32. Lutgendorf P. *The Life of a Text: Performing the Ramcaritmanas of Tulsidas*. Berkeley: University of California Press; 1991.
33. Omvedt G. *Dalit Visions: The Anti-Caste Movement and the Construction of an Indian Identity*. New Delhi: Orient Longman; 1995.
34. Ambedkar BR. *The Buddha and His Dhamma*. Bombay: Siddharth Publication; 1957.
35. Mishra V. *Devotional Poetics and the Indian Sublime*. Albany: State University of New York Press; 1998.
36. Freitag SB. *Collective Action and Community: Public Arenas and the Emergence of Communalism in North India*. Berkeley: University of California Press; 1989.
37. Agrawala V. *Kabir Aur Unka Yug*. Varanasi: Nagari Pracharini Sabha; 1960.
38. Agrawala P. *Akath Kahani Prem Ki: Kabir Ki Kavita Aur Unka Samay*. New Delhi: Rajkamal Prakashan; 2009.
39. White DB. *The Alchemical Body: Siddha Traditions in Medieval India*. Chicago: University of Chicago Press; 1996.
40. Briggs GW. *Gorakhnath and the Kanphata Yogis*. Calcutta: YMCA Publishing House; 1938.
41. Sangari K. *Politics of the Possible: Essays on Gender, History, Narratives, Colonial English*. New Delhi: Tulika; 1999.
42. Bayly CA. *Rulers, Townsmen and Bazaars: North Indian Society in the Age of British Expansion, 1770–1870*. Cambridge: Cambridge University Press; 1983.
43. Macauliffe MA. *The Sikh Religion: Its Gurus, Sacred Writings and Authors*. Vol. 6. Oxford: Clarendon Press; 1909.
44. Muktibodh GR. *Kabir Kavitavali*. Bhopal: Madhya Pradesh Hindi Granth Academy; 1975.
45. Sharma AK. *Bhakti Andolan Aur Uske Pramukh Sant*. Delhi: Motilal Banarsidass; 2001.

© Shodh Prakashan